International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 6; November 2018; Page No. 48-49

सार्वजानिक व्यय एक अध्ययन

विपिन कुमार सिंह
अर्थशास्त्र विभाग, तिलकधारी महाविद्यालय, जौनपुर, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

कई शताब्दी तक अर्थशास्त्रियों ने सार्वजानिक व्यय को बहुत ही कम महत्व दिया था। उनका ध्यान केवल सार्वजानिक आय पर ही अधिक केन्द्रित था। इसका प्रमुख कारण यह था कि उस समय तक राज्य को अधिक कार्यें का सम्पादन नहीं करना पड़ता था। परन्तु अब उपर्युक्त स्थिति में बदलावा आया है, आधुनिक राज्यों तथा अन्य स्थानीय संस्थाओं की गतिविधियाँ दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। वर्तमान युग में सार्वजानिक व्यय को दो कारणों से अत्यन्त महत्व प्राप्त हुआ है। प्रथम, वर्तमान राज्यों की आर्थिक क्रियाओं में अनेक प्रकार से वृद्धि हो गयी है और द्वितीय, अब यह भी अनुभव किया जाने लगा है कि किसी राष्ट्र के आर्थिक जीवन पर अर्थात् उत्पादन, वितरण और आर्थिक क्रियाओं के सामान्य स्तर पर लोक व्यय की प्रकृति व मात्रा का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ सकता है।

सार्वजनिक व्यय राज्य–वित्त का वह भाग है, जिसमें इस बात का अध्ययन किया जाता है कि सरकार किस प्रकार व्यय करती है। सार्वजानिक व्यय ही सरकार की वित्तीय क्रियाओं का अन्तिम लक्ष्य होता है। प्राचीन अर्थशास्त्रियों ने सार्वजानकि व्यय की ओर बहुत कम ध्यान दिया क्योंकि उस समय सरकार का कार्य क्षेत्र सीमित था। सरकार केवल सुरक्षा का कार्य ही सम्पन्न करती थी व आर्थिक कार्यें में रूचि नहीं लेती थी। इस कारण सरकार का व्यय भी कम होता था। उस समय सार्वजानिक व्यय को अनुत्पादक व उनुपयोगी माना जाता था।

एच. पारनेल के मतानुसार ''देश के अन्दर सामाजिक व्यवस्था बनाये रखने के लिए और देश को बाहरी आक्रमणों से बचाये रखने के लिये कम से कम जितने खर्च की आवश्यकता है उसके अतिरिक्त सरकार द्वारा किया गया व्यय फिजूल खर्ची, अन्यायपूर्ण व समाज पर भार है।''[1]

किन्तु वर्तमान समय में परिस्थितिया विल्कूल बदल गई है। वर्तमान समय में सरकार सुरक्षा व नागरिक प्रशासन के अतिरिक्त विकास कार्यों में भी रूचि लेती है। इस कारण सरकार के व्ययों में भी वृद्धि हो गई है। अतः आज सार्वजनिक व्यय की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। सार्वजानिक व्यय आज राज्य–वित्त का एक महत्वपूर्ण भाग बन गया है।'' प्राचीन अंग्रेजी लेखकों ने व्यय के सिद्धान्त के अध्ययन की आवश्यकता को अनुभव नहीं किया, क्योंकि सरकार के सिद्धान्त को, जिसे वे मानते थे, वे सरकारी कार्यों को स्थिर सीमा तक ही मानते थे।[2] यह माना जाता रहा है कि व्यक्ति सरकार की अपेक्षा अधिक कुशलता से धन व्यय कर सकता है। अतः सरकारी व्यय को अनावश्यक एवं अनुपयोगी माना जाता था। राबर्ट पील का कथन था कि राज्य की तुलना में मुद्रा जनता के हाथों में अधिक फलदायी सिद्ध हो सकती है।[3] सार्वजनिक व्यय का विरोध करते हुए ग्लेडस्टोन ने बहुत तीव्र एवं खतरनाक बताया है। आधुनिक अर्थशास्त्री इस विचार से सहमत नहीं हें। डाल्टन का मत है कि ''आधुनिक अर्थशास्त्री ऐसे गलत विचारों को ठीक करने में ढ़ीले रहे हैं और इस प्रश्न को सिद्धान्त के आधार पर विवकपूर्ण ढ़ंग से रखने में समर्थ हुए हैं।[4]

सार्वजनिक व्यय में वृद्धि के कारण

19वीं शताब्दी के जर्मन अर्थशास्त्री वैगनर ने राज्य की क्रियाओं में वृद्धि का नियम बनाया। इस नियम में वैगनर का मत था कि ''विभिन्न राष्ट्रों एवं विभिन्न समयों की विस्तृत तुलना करने से ज्ञात होता है कि विकासशील व्यक्तियों के समाज में जिससे हम सम्बन्धित हैं, केन्द्रीय एवं स्थानीय दोनों ही सरकारों के कार्यों में नियमित वृद्धि होती रही है।''[5]

टेलर के अनुसार ''डाल्टन युग में सार्वजनिक व्यय की मात्रा व क्षेत्र दोनों बढ़ गए हैं क्योंकि राज्य के कार्यों में न केवल वृद्धि हुई वरन् विस्तृत वृद्धि भी हुई है।''

डाल्टन ने भी इसी मत का समर्थन करते हुए कहा है ''कल जिस कार्य को राज्य द्वारा किया जाना मूर्खतापूर्ण माना जाता था, आज उचित माना जा रहा है और आज जिस कार्य को राज्य द्वारा किया जाना मूर्खता पूर्ण माना जाता है उसे कल उचित माना जाएगा।'' डाल्टन का मत है कि ''अन्य क्षेत्रों में आधुनिक विकास ने जनसत्ताओं को न ये कार्य अपनाने को बाध्य कर दिया है, जो कि वास्तव में निजी साहसी द्वारा पूर्ण नहीं किये जा सकते थे।''[6]

सार्वजनिक व्यय के सिद्धान्त

फिण्डले शिराज द्वारा सार्वजनिक व्यय के प्रमुख सिद्धान्तों को निम्न प्रकार बतालाया है–

1. लाभ का सिद्धान्त
2. मितव्ययिता का सिद्धान्त
3. स्वीकृति का सिद्धान्त
4. अधिक्य का सिद्धान्त

अन्य सिद्धान्त

सार्वजनिक व्यय करते समय कुछ अन्य बातों का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। सार्वजनिक व्यय करते समय व्यय की विभिन्न मदों के सापेक्षिक महत्व, विभिन्न क्षेत्रों की जनसंख्या व उनकी आवश्यकताओं, साधनों की उपलिब्ध, व्यय की अनिवार्यता, कार्य को

पूरा होने आदि के सम्बन्ध में ध्यान रखा जाना चाहिए।
उपरोक्त निष्कर्ष से यह स्पष्ट होता है कि सार्वजनिक व्यय सरकार का एक प्रमुख अंग है।

सन्दर्भ

1. Adams, Quoted by H. Dalton: Public Finance p.139.
2. P.E. Taylor: The Economics of Public Finance, p.44.
3. Findley Shirras: The Science of Public Finance, p.42.
4. Findley Shirras: The Science of Public Finance, p.45.
5. Buehler: Public Finance, p.61.
6. Spriegal: Industrial Management, p.32.